ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-9* December-2021
Anthology : The Research

प्रकृति-मानव अन्तःसम्बन्ध एवं संस्कृत
Nature-Human Interrelationship and Sanskrit

Paper Submission: 10/12/2021, Date of Acceptance: 20/12/2021, Date of Publication: 21/12/2021

अंजू सेठ
प्राध्यापिका ,
संस्कृत विभाग,
सत्यवती महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली, भारत

सारांश

संस्कृत साहित्य मानव ज्ञान विज्ञान के चरम का प्रमाण है। वर्तमान जगत् की सभी समस्याओं के निराकरण का वैज्ञानिक मार्ग वैदिक एवं संस्कृत साहित्य में यत्र तत्र उपलब्ध होता है। अतः पर्यावरण विषयक चिन्तन का आरम्भ भी संस्कृत के आधार पर ही किया जाना उचित ही है। संस्कृत न केवल वेदों की, वरन विश्व की प्राचीनतमा संस्कृति की गवाक्ष स्वरूप है, जिसमें प्रकृति का सम्बन्ध केवल मानव जीवन के बाह्य पक्ष से ही नहीं बल्कि उसके अन्तर्मन है। प्रकृति और मानव का यह अन्तःसम्बन्ध ही मानव वाणी को मर्मस्पर्शी एवं हृदय उद्वोलक प्रभाव प्रदान करता है। संस्कृत में निबद्ध साहित्य में प्राप्त उदाहरणों की सहायता से इस सम्बन्ध को जानना सरल हो जाता है।

Sanskrit literature is the proof of the peak of human knowledge science. The scientific way to solve all the problems of the present world is available everywhere in Vedic and Sanskrit literature. Therefore, it is appropriate to start thinking about the environment on the basis of Sanskrit itself. Sanskrit is not only the form of the Vedas, but also of the oldest culture of the world, in which the relation of nature is not only with the outer aspect of human life but also with its inner side. It is this interrelationship of nature and human that gives human speech a touching and heart-rending effect. With the help of examples found in Sanskrit literature, it becomes easy to know this relation.

मुख्यशब्दः प्रकृति-मानव अन्तःसम्बन्ध एवं संस्कृत।
Keywords: Vedas, Vedic, Soumansya, present age.

प्रस्तावनाः

भारतभूमि देवभूमि है। हमारी सभ्यता, संस्कृति, प्रकृति एवं पर्यावरण सब ईश्वरीय देन है जिसके माध्यम से हम भारतीय विश्व के सभी मानवों को विभिन्न शिक्षाएँ एवं धरोहर प्रदान करते हैं। प्रकृति के सभी उपादान निस्वार्थ भाव से मानव सेवा में रत होकर मानवता का संवर्धन एवं संरक्षण करते हैं। अक्षरा, अघ्न्या संस्कृत भाषा की जीवन्तता एवं सातत्य स्वतः सिद्ध है। संस्कृत भाषा में प्रकृतिप्रदत्त संरक्षण एवं संवर्धन अत्यन्त सूक्ष्मता से विश्लेषित किया गया है क्योंकि वैदिकयुग के ऋषियों ने प्रकृति के सभी तत्त्वों का साक्षात् दर्शन कर उनको आत्मसात कर उनके देवत्वरूप का ही वर्णन किया है।

ऋषयस्तु मंत्रद्रष्टारः न तु कर्तारः

सभी ऋषि त्रिकालदर्शी एवं भविष्यद्रष्टा थे जिन्होंने पर्यावरण पर आने वाली समस्याओं की संभावनाओं को सूक्ष्मरूप से देखकर जनसामान्य को जागरूक करना एवं सावधान करना अपना परम कर्त्तव्य समझा था। भारतदेश तो स्वयं ही प्रकृति के संरक्षण से ओतप्रोत है। पर्वत, सागर, नदियाँ, जलप्रपात एवं सर्वप्रमुख यहाँ की पावन धरा, सर्वत्र ही प्रकृति ने चारों तरफ से मानो भारतभूमि को अपने आंचल में समेट रखा है। वास्तव में ''पर्यावरण'' शब्द का वास्तविक अभिप्राय है ***"परितः आवरणम्"***। चारों ओर से आवृत्त संरक्षित –

''परितः सम्यक् वृणोति आच्छादयाति इति पर्यावरणम्''

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में पर्यावरण चिन्तन समाहित है तथा प्रत्येक पग-पग पर प्रकृति अपना अस्तित्व स्पष्ट करती हुई मानवजाति को भविष्य हेतु चेतावनी भी देती हुई प्रतीत होती है कि संसाधन सीमित हैं उनका अपव्यय नहीं होना चाहिए। भारतीय संस्कृति आद्या संस्कृति है -

''सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा''

इस संस्कृति की संवाहिका संस्कृत भाषा पर्यावरण चेतना से पग-पग पर ओतप्रोत है। सर्वप्रथम वैदिक साहित्य की मूल प्रतिष्ठा ही पर्यावरण संरक्षण है। सभी देवताओं का वर्णन प्रकृति के उपादानों के प्रतीकात्मक रूपों में किया गया है इन्द्र, वरूण, सूर्य, अग्नि, रूद्र अश्विनों, उषा आदि देवी देवताओं की उपासना ही प्रकृति की उपासना है यह वैदिक युग का प्रथम ध्येय था ताकि सामान्य मानव अपनी प्रकृति से समन्वित होकर भावनात्मक रूप से उससे जुड़ा रहे।

'सूर्य देवो भव'' (सूर्य को देव मानो)
''ओउम् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरण्यम्।
भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्॥
ऊं विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि परासुव
यद् भद्रं तन्न आ सुव। (यजुर्वेद 30/3)
आदित्यो ह वै प्राण

वैदिक पर्यावरण चिन्तन अत्यन्त सकारात्मक एवं उपदेशात्मक था। वैदिक ऋषि अग्नि से स्वयं को सुपथ पर ले जाने एवं सम्पत्ति प्राप्ति हेतु प्रार्थना करते हैं।

'अग्ने नय सुपथा राये''

वैदिक युग में वायुमंडल की शुद्धि हेतु यज्ञ का विधान था। यज्ञ पर्यावरण शुद्धि एवं सुरक्षा हेतु विशिष्ट सहायक है। वर्तमान युग की सभी वायरस इत्यादि समस्याओं का समाधान वैदिक यज्ञ ही है। यजुर्वेद में प्रार्थना की गई है -

"न पर्जन्योवर्षतुफलवत्यो नः औषधयः पच्यन्ताम्।"

इसके अतिरिक्त वैदिक युगीन ऋषि पर्यावरण शुद्धि हेतु शान्ति स्रोतों का स्तवन करते थे।

"शांता द्यौ शांता पृथिवी शान्तमिदमुर्वन्तरिक्षम्
शान्ता उदन्वतीरापः शान्ता नः सन्त्वौह
वनस्पतयः शान्तिः विश्वदेवाः शान्ति सर्वं
ऊं शान्ति शान्तिरेव शान्ति
ऊं द्यौ शान्ति अंतरिक्ष शान्ति पृथिवी शान्तिः औषधयः शान्तिः"

यजुर्वेद में स्पष्ट किया गया ***"मापो मौषधीर्हिंसी"*** अथर्ववेद का भूमि सूक्त सम्पूर्ण मानव जाति को पृथ्वी की संतान बताकर पृथ्वी का वर्चस्व उद्घोषित करता है।

"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"

प्रकृति वर्णन के साथ-साथ समपर्ण भावना एवं एकत्व तथा अखण्डता की भावना का भी प्रचार-प्रसार वैदिक ऋषि कर जाता है।

"अहं राष्ट्री संगमनी वसूनाम्" में यही भावना दृष्टिगत होती है।

उपनिषदों में वायु में दैवीय शक्ति की अवधारणा समन्वित है।

"वायु ह वै प्राणो भूत्वा शरीरमाविशत्"

अथर्ववेद में पर्यावरण के तीन घटक जल, वायु एवं औषधियों का वर्णन है।

रामायणमहाभारतादि ग्रन्थ पर्यावरणीय चेतनायुक्त तथ्यों के साथ-साथ उपदेशात्मक विचार भी हमारे मन मस्तिष्क में परिप्लावित कर देते हैं। सर्वप्रथम तो स्वदेश प्रेम, स्वमातृभूमि प्रेम का सन्देश यहाँ दिया गया है।

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"

रामायण में पशुपक्षियों के प्रति सम्मानभाव अत्यन्त विशदता से वर्णित है। वाल्मीकि ने प्रकृति व मनुष्य के सम्बन्धों का अत्यन्त सूक्ष्मता से वर्णित किया है।

"दीननाग तुरंगसभा"। अयोध्याकाण्ड में चित्रकूट के मार्ग में ऋषि भारद्वाज से मिलने पर वसिष्ठ एवं भरत पेड़ पत्ते वृक्ष हाथी इत्यादि का भी हाल पूछते है। अशोक वाटिका वर्णन, रामवनवास वर्णन, कन्दमूल वर्णन, पग-पग पर प्रकृति पर मानव की निर्भरता का वर्णन है।

"वसिष्ठो भरतश्चैव पप्रच्छत्तुनामयम्
शरीरेग्निषु शिष्येषु वृक्षेषु मृग पक्षिषु।"

पम्पासरोवर वर्णन पर्यावरण संरक्षण का मुख्य उदाहरण है। रामायण में प्रकृति व मानव के परम्परा प्रेम द्वारा दोनों के अन्तर्सम्बन्ध एवं पर्यावरण के प्रति जागरूकता एवं विचारशुद्धि का परिचय दिया गया है। क्रौंच वध की घटना से आकुल वाल्मीकि प्रकृति संरक्षण के में उठी कविता ही के कारण ही रामायण की रचना का मूलस्रोत बनी हुई।

"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः
यत्क्रौंच मिथुनाद् एकमवधीः काममोहित्"

महाभारतकालीन संस्कृति उद्यानप्रधाना थी प्राणिकर्म के साथ वहाँ मैत्री की शिक्षा दी गई। महाभारत कालीन संस्कृति उद्यानप्रधाना थी प्राणिकर्म के साथ वहाँ मैत्री की शिक्षा दी गई। जलसंरक्षण एवं जल की पावनता का वर्णन वहाँ उपलब्ध होता है। पेड़-पौधे सन्तानवत् प्रिय थे।

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥

गीता में भी प्रकृतितत्वों का विवेचन उपलब्ध है।

अश्वत्थोऽयं प्रपञ्चो न हि खलु सुखलेशोऽप्यत्रतस्माज्जिहास्यो
लोका इत्यादरेण प्रणतभयहरो वारणाग्र्यास्य एषः।
बोधायैव स्वयं किं वसति दृढतराश्वत्थमूलेकृपालु
र्नाहं जानामि यूयं वदत बुधवराः किं तथा वाऽन्यथा वा॥

महाभारत में वृक्षों को पुत्रवत् तारने वाला वर्णित किया गया है।

'पुष्पिताः फलवन्तश्च तर्पपतीह मामगन्।
वृणदं पुत्रवत् वृणास्तारयन्ति परत्रतू॥" (महाभारत अनुशासन)

महाभारत में पर्यावरण एवं मानव के निकटतम सम्बन्धों का सूक्ष्म वर्णन उपलब्ध होता है। गीता के सातवें अध्याय में श्रीकृष्ण का कथन इस विषय में विशिष्ट द्रष्टव्य है -

"रसोऽहमासु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुष नृषुः
पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु॥"

सृष्टि के कण-कण में ईश्वरीय सत्ता के साथ-साथ पर्यावरणीय तत्त्वों का समावेश है। वे तत्त्व मानव जीवन के अभिन्न अंग हैं जिनके बिना मानव जीवन की कल्पना व्यर्थ है। स्मृतिग्रन्थों एवं पुराणों में अधिकांशतः भौगोलिक पर्यावरण एवं सीमाओं का विशिष्ट विवेचन प्राप्त होता है। देवभूमि भारतभूमि की सीमाएं एवं

अन्तर्निहित प्राकृतिक सीमाओं का पूर्णविवेचन मनुस्मृति में उपलब्ध है। आयावर्त, मध्यदेश विन्ध्यदेशादि के विवेचन द्वारा, तपस्वी ब्रह्मचारियों के द्वारा पर्यावरण वर्णन, संरक्षण एवं संवर्धन का मार्मिक उपदेश प्राप्त होता है। पौराणिक साहित्य में पर्यावरण पर अधिक विवेचन कर उसके मानव के साथ विद्यमान भावनात्मक सम्बन्धों को मार्मिक रूप से प्रस्तुत किया गया है -

"दश कूप समावापी, दशवापी समोह्रदः।
दशह्रदसम पुत्रो, दशपुत्रसमो द्रुमः॥"

अर्थात् दस कुओं के समकक्ष बावड़ी है दश बावड़ियों के बराबर एक तालाब हैं दस तालाबों के समकक्ष एक पुत्र है एवं दस पुत्रों के समकक्ष एक वृक्ष है। वृक्षों के प्रति इतना प्यार दुलार एवं मोह की भावना अन्यत्र किसी देश में या साहित्य में अतिदुर्लभ है। संस्कृतसाहित्य की ओर दृष्टिपात करने पर पर्यावरण चेतना इतनी अधिक उपलब्ध होती है। सारे साहित्य में वृक्षों, पशु-पक्षियों, जीवों को अत्यन्त आदर एवं भाई का स्थान भी दिया गया है। अभिज्ञान शाकुन्तलम् में शकुन्तला का कथन है -

"न केवलं तातनियोग एव। अस्ति मे सहोदरस्नेहप्येतेषु।"

अर्थात् इन्हें मैं वृक्ष समझकर या पिता की आज्ञा मानकर सिंचित नहीं कर रही अपितु इन पर मुझे सगे भाई का सा स्नेह है। दृष्टव्य है कि प्रकृति कन्या शकुन्तला के जीवन में इन वृक्षों, हिरणों एवं लताओं का साहचर्य इतना महत्त्वपूर्ण था कि उसके वियोग से हिरणियों ने दर्भ खाना छोड़ दिया -

"उद्गलित दर्भकवलाः मृगयःअपसृत पाण्डुपत्राः"

कण्व भी जब शकुन्तला की विदाई से करूणायुक्त हो जाते हैं तो तपोवन के वृक्षों से उसकी विदाई की आज्ञा लेते हैं। प्रकृति एवं मानव का अपूर्व सम्मिलन अन्यत्र किसी भी विदेशी साहित्य में दुर्लभ एवं दुष्कर है। हमें अपने साहित्य पर गर्वित होना चाहिए जो मनुष्य एवं प्रकृति को एकाकार कर देता है।

'भो भो सन्निहितास्तपोवनतरनः
पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मांयापीतेषु
नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतास्नेहेन या पल्लवम्
आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्याः भवत्युत्सवः
सेयम् याति शकुन्तला पतिगृहं सवैरनुज्ञायताम्"

शकुन्तला की विदाई के समय भी किसी वृक्ष ने बनारसी वस्त्र, किसी ने क्षौभयुगल तो किसी वृक्ष ने आभूषण प्रदान किए थे। प्रकृति की ऐसी अनुकम्पा प्रकृतिकन्या पर ही संभव है तभी तो नवप्रसूत मृगपोत उसका आंचल नहीं छोड़ पाता। वह नवमालिका वनण्योत्सनादि लताओं से भगिनीवत् निश्छल स्नेह करती है। अभिज्ञान शाकुन्तल में तो राजा भी तपस्वियों के कहने पर आश्रममृग की हत्या नहीं करता -

"आश्रममृगोऽयं न हन्तव्यः न हन्तव्यः"

इतना सुनने पर भी राजा शस्त्र रोक लेता है। "यात्येकतो पतिरौषधीनाम्" इत्यादि के माध्यम से सूर्यचन्द्र रूप प्रकृतितत्त्वों को वर्णन है। अभिज्ञान शाकुन्तल के अतिरिक्त रघुवंश में यज्ञ की महिमा रघुवंशी राजाओं के वर्णन के समय वर्णित है -

"सोऽहमिज्या विशुद्धात्मनः। प्रणालोप निमिलितः
प्रकाशश्चाप्रकाशश्च लोकालोक इवाचलः"

कालिदास ने तो पर्यावरण संरक्षण को पर्यावरणीय चेतना को परोपकार से समन्वित करने का प्रयास किया है -

"भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैर्नवाम्बुधिदूरविलम्बिनोघनाः
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्"

प्रसिद्ध गीतिकाव्य मेघदूत एवं ऋतुसंहार में ली प्रकृति अपने सम्पूर्ण रूप में मानवीकरण के रूप में उपदेश देती हुई सी प्रतीत होती है। मेघ को दूर बनाकर भेजने की संकल्पना मेघ का मानवीकरण करके उसे सजीव एवं भावयुक्त बनाने का ही प्रयास है। मार्ग में आने वाले जीवजन्तु, पशुपक्षी, पर्वत, नदियों, वन, उपवनों का विस्तृत वर्णन भौगोलिक पर्यावरण को अत्यधिक स्पष्ट करता है।

"त्वय्यासये परिणतफलश्यामजम्बू वनान्तः।"
"दुरमाः सपुष्पाः सलिलं सपद्मं स्त्रियः सकामाः पवनः सुगन्धिः
सुखाः प्रदोषा, दिवसाश्च रम्याः सर्वम् प्रिये चास्तरं वसन्ते॥"

एवमेव महाकविभास ने संध्यासमय यज्ञादिमय का तथा पक्षीसमुदाय का तथा संध्यासमय तपोवन का सुन्दर वर्णन प्रस्तुत किया है जो नाटककार की सूक्ष्मेक्षिका का परिचायक है -

'खगाः वासोपेता" सलिलमवगाढो मुनिजनः
प्रदीप्तोऽग्निर्भाति प्रविचरति धूमो मुनिवनम्।"

"चारुदत्त" नाटक के अन्तर्गत वर्णित सूर्यास्त एवं चन्द्रोदय का मनोहारी वर्णन मानव मन के साथ संयुक्त पर्यावरण को द्योतित करता है क्योंकि जैसा परिवेश होगा वैसी ही मानसिक स्थिति होगी -

"उदयति हि शशांकः क्लिन्नखर्जूरपाण्ड
र्युवती जनसहायो राजमार्गप्रदीपः
तिमिरनिचयमध्ये रमूमयो यस्यं गोरोः
हूतजल इव पंके शीरधाराः पतन्ति॥"

मानवमन की विविध प्रकल्पनाओं एवं संभावनाओं का तारतम्य पर्यावरण के साथ अत्यन्त घनिष्ठ है। इसका विशद विवेचन आधुनिक साहित्य में भी उपलब्ध है -

"विपुला धरणीं ततोऽपि विपुलः सागरतलविस्तारः
विपुलतरोऽसिऽयं परं त्वदीयः संकल्पाकूपाराः"

अर्थात् मन में उठने वाले विचार संकल्प, निश्चय सभी पर्यावरण पर आश्रित हैं। ऐसा "गीतधीवरम्" में स्पष्ट किया गया है।

"दैन्यविहीनं त्वं विस्तारय सुदृढं मनोविज्ञानम्"

अर्थात् मन को सुदृढ़ बनाने का संदेश प्रकृतिवर्णन एवं पर्यावरण के माध्यम से दिया गया है - "यूयं दीपं प्रज्ज्वत् तिमिरं स्वयमेव गमिष्यति रे" का उद्घोष करता हुआ कवि सर्वत्र आशावादी पर्यावरण का प्रसार कर रहा है।

"कदलीदलकुरजायितस्य एतत्कुटीरस्य"

वर्णित करते हुए अम्बिकादत्त व्यासजी कुटिया की पवित्रता विस्तार एवं शोभनीयता का वर्णन करते हुए उच्चकोटि के शुद्ध पर्यावरण को वर्णित कर रहे हैं। अतः हमारा पर्यावरण साहित्यदृष्ट्या अप्रदूषित था। आज भी हमारे प्रयास एवं संकल्पों के माध्यम से पर्यावरणप्रदूषण रूक सकता है। उसका प्रयत्न हमें करना होगा।

अध्ययन का उद्देश्य

इस शोध पत्र का उद्देश्य मानव मात्र को प्रकृति के महत्त्व से अवगत करवाना है। व्यक्ति प्रकृति के संरक्षण के लिए प्रेरित हो, पर्यावरण शुद्धि की ओर प्रवृत्त हो, जिससे वर्तमानकालिक पर्यावरणीय समस्याओं का निदान हो सके।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि सम्पूर्णसंस्कृत साहित्य पर्यावरणीय चेतना, पर्यावरण संरक्षण एवं पर्यावरण संवर्धन रूपी विचारों से सुसज्जित रहा। संस्कृत साहित्य में मुख्यतः भौगोलिक पर्यावरण, सांस्कृतिक पर्यावरण एवं सामाजिक पर्यावरण की प्रमुखता रही। संस्कृत साहित्य विदित पर्यावरण विवेचन कवियों द्वारा केवल मात्र प्रकृतिप्रेम का परिचायक न होकर वरन् उपदेशात्मक, पारस्परिक सौहार्द का परिचयात्मक एवं मानवीकरण तथा प्रकृति एवं मानव के घनिष्ठ सम्बन्धों का सूचनात्मक परिवेश बन परिपुष्ट परिवृद्ध एवं सुसज्जित होता रहा। संस्कृत साहित्य में उपलब्ध प्रकृति प्रेम एवं पर्यावरण चेतना हम सभी भारतीयों के लिए अनुकरणीय है। हमारे विचार ही पर्यावरण को नवीनता एवं नए आयाम देकर संरक्षित करेंगे। प्रकृति के अस्तित्व संरक्षण का कदम उठाएँ अन्नजल वृक्ष संरक्षण द्वारा धरती को बचाएँ -

"आओ शिवसंकल्प युक्त मन बनाएँ
धरती को प्रदूषण मुक्त बनाएँ
प्राचीन धरोहर जनहेतु उपलब्ध कराएँ
जन जन में जागृतिमशाल जलाएँ
प्रकृति के अस्तित्व संरक्षण का कदम उठाएँ
अन्न जल वृक्ष संरक्षण द्वारा धरती को बचाएँ।"
"जयतु संस्कृतम्
जयतु भारतम्
जयतु पर्यावरणम्"

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *ऋग्वेद संहिता भट्टाचार्य श्रीपाद शर्मा, स्वाध्याय मण्डल, बलसाड, संस्करण 1969*
2. *अथर्ववेद (खण्ड-1) आचार्य डा० मुंशी राम शर्मा 'सोम', भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ, संस्करण 1992*
3. *अपना पर्यावरण डा० एम० के० गोयल, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, संस्करण 1995*
4. *अभिज्ञान शाकुन्तलम् डा० कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायण लाल विजय कुमार प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2011*
5. *उत्तररामचरितम् डा० कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2011*
6. *पर्यावरण और जीव - प्रेमानन्द चन्दोला, हिमाचल पुस्तक भण्डार, दिल्ली, संस्करण 1992*
7. *पर्यावरण विज्ञान के० एल० तिवारी, एस० के० जाधव, आई० के० इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, संस्करण 2009*
8. *पर्यावरणीय शिक्षा डा० आर०ए० शर्मा, आर० लाल बुक डिपो, मेरठ, संस्करण 2009*
9. *पुराणगत वेद विषयक सामग्री का समीक्षात्मक अध्ययन डा० राम शंकर भट्टाचार्य, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, संस्करण 1965*
10. *महाभारत (भीष्म पर्व) - श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, औंध, जिला- सतारा, संस्करण वि० सं० 1983*
11. *मृच्छकटिकम् डा० जगदीश चन्द्र मिश्र, चौखम्बा सुरभारती द्विवेदी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, दिल्ली, संस्करण 2001*
12. *संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण. डा० शंकर लाल शास्त्री, हंसा प्रकाशन, जयपुर, संस्करण 2009*
13. *संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास डा० राधावल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण 2011*
14. *संस्कृत साहित्य का इतिहास विद्याभवन, वाराणसी, संस्करण 2003*